Chapter. 6

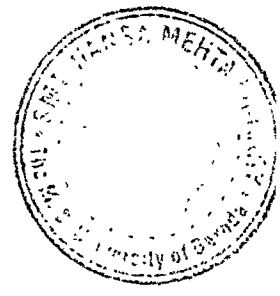

: षष्ठ अध्याय :

: उपसंहार :

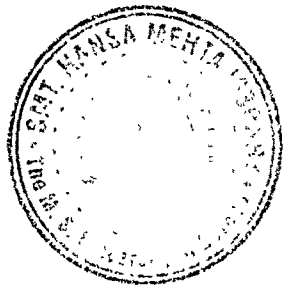

The Smt. Hansa Mehta Library

: षष्ठ अध्याय :

: उ प सं हा र :

' कँटीले इस जग-वृक्ष पर , सुन्दर दो ही डार ।
अनुशीलन साहित्य का , गुणी जनों का प्यार ।।'

संसार के इस वृक्ष पर काँटे ही काँटे हैं , किन्तु उसकी दो वृन्त बड़ी ही सुन्दर हैं । एक है साहित्य का अनुशीलन और दूसरी वृन्त है गुणी जनों का प्रेम । इन दोनों की प्राप्ति सद्भाग्य हो तो ही हो सकती है । साहित्य का अनुशीलन , साहित्य का अध्ययन , साहित्य का अनुराग , यह ऐसा तत्व है कि समय कैसे व्यतीत हो जाता है , पता ही नहीं चलता । साहित्यानुरागी व्यक्ति कभी अकेलापन महसूस नहीं कर सकता , क्योंकि उसके आसपास तो एक ऐसी दुनिया है , एक

ऐसा संसार है , कि जब चाहे तब उनसे संवाद कर सकता है । लोकमान्य तिलक कहा करते थे कि आप मुझे अच्छी-अच्छी किताबें दो तो मै नरक को भी स्वर्ग बना सकता हूं । कविवर रवीन्द्रनाथ टैगोर कहते थे कि वे लोग बड़े ही भाग्यशाली हैं जिन्होंने काव्य और शास्त्र दोनों को पढ़ा है , उनका भाग्य मध्यम है जिन्होंने या तो केवल काव्य पढ़ा है या फिर केवल शास्त्र , किन्तु उनका भाग्य तो मंदातिमंद है जिन्होंने न काव्य पढ़ा है न शास्त्र । काव्य और साहित्य के विनोद में समय अच्छी तरह से कट जाता है । तो यह संसार की एक डार है । और दूसरी डार है -- गुणीजनों का प्रेम । संसार में वे लोग बड़े ही भाग्यशाली हैंजिनको गुणीजनों का प्यार मिलता है , अन्यथा अधिकांश लोगों का तो रोना रहता है -- " भयो क्यों अनचाहत को संग । " लक्ष्मण , केवट , शबरी , हनुमान , सुग्रीव , विभीषण आदि कुछ ऐसे भाग्यशाली लोग थे जिनको राम का प्रेम नसीब हुआ था ; अर्जुन , द्रौपदी , कुन्ती , व्यास , विदुर आदि भी ऐसे ही भाग्यशाली लोग थे जिनको कृष्ण का प्रेम प्राप्त हुआ था ।

और मै इस अर्थ में स्वयं को भाग्यशाली मान रहा हूं कि गुरुदेव टैगोर के अनुसार मुझे काव्य अर्थात् साहित्य पढ़ने का अवसर मिला और पी-एच.डी. शोधकार्य हेतु एक ऐसा विषय मिला जिसके कारण कुछ शास्त्रों को भी पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ । भूमिका में निर्दिष्ट किया जा चुका है कि शैशव काल से ही मेरी रूचि रामायण-महाभारत की कथाओं के श्रवण और पठन में थी । समय के साथ उसमें वृद्धि भी होती गई और परिष्कार भी । जीवन में अवसर का बड़ा ही महत्व है । एम.ए. में विशेष पत्र के रूप में उपन्यास लेना , उपन्यास के अध्यापकों में देसाई साहब तथा कहार साहब जैसे गुरुओं का मिलना , औपन्यासिक प्रवृत्तियों के विकास कोपढ़ते हुए "पौराणिक" उपन्यास जैसी विधा से परिचित होना , डा. नरेन्द्र कोहली के एतद्विषयक उपन्यासों के विषय में जानकारी प्राप्त होना , "दीक्षा" उपन्यास को पढ़ना और प्रभावित होना , ये सब अवसर ही तो हैं ।

डा. नरेन्द्र कोहली का पौराणिक उपन्यासों की ओर आना भी एक संयोग है । अन्यथा उनका ~~प्रारंभिक~~ प्रारंभिक लेखन तो व्यंग्योन्मुखी ही था । जीवन की कटु परिस्थितियों ने व्यंग्य की उस भूमि का सिंचन भी किया । कालेज का परिवेश , आयेदिन गुण्डागर्दी का बढ़ना , उसमें बुद्धिजीवियों की निर्वीर्य तटस्थ भूमिका और तभी बांगलादेश के निर्माण का इतिहास , उसमें श्रीमती इन्दिरा की भूमिका , हजारों साल बाद उस इतिहास का दोहराना जब भारत की सेनाओं का एक दूसरे देश के लोगों को आततायियों से मुक्ति दिलाने हेतु लड़ना और उसमें विजयी होना । लेखक के भीतर का विश्वामित्र जाग उठा और तभी हुआ "दीक्षा" उपन्यास का सृजन । फिर तो यह कथा-यात्रा अनवरत चलती रही । रामायण पर चार उपन्यास आये -- दीक्षा , अवसर , संघर्ष की ओर और युद्ध । इनकी सफलता ने लेखक को और प्रेरित किया और आयी महाभारत पर उपन्यास-~~शृंखला~~ श्रृंखला -- बंधन , अधिकार , कर्म , धर्म , अंतराल , प्रच्छन्न , प्रत्यक्ष और निर्बन्ध । "महासमर भाग-1 से 8 " — ~~पन्द्रह~~ पन्द्रह साल के अथक परिश्रम का परिणाम ।

रामायण और महाभारत ये दो ग्रन्थ , ये दो महाकाव्य , भारतीय संस्कृति के मूलाधार हैं । हमारे उपजीव्य ग्रन्थ हैं ये । उनके बिना न हम चल सकते हैं , न हमारा साहित्य । यह एक ऐसी कथा-मंजूषा है कि उसमें सहस्त्रों कथाएं हैं , सहस्त्रों प्रसंग हैं , सहस्त्रों पात्र हैं जो हमें , हमारे जीवन को , निरंतर प्रेरणा का पीयूष पिलाते रहते हैं । कोई ऐसा भारतीय लेखक नहीं होगा , कवि नहीं होगा , चित्रकार नहीं होगा , शिल्पकार नहीं होगा , नाटककार नहीं होगा जिसने कभी सृजन-हेतु इन दो महाग्रन्थों से सहायता न ली हो , जो कभी उनके पास न गया हो । कहते हैं आशुतोष शंकर बहुत शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं और कभी अपने भक्तों को निराश नहीं करते । ये दो महाग्रन्थ भी वैसे ही हैं , कभी प्रतिभावन्तों को निराश नहीं करते ।

गुजराती के उमाशंकर जोशी और सितांशु गये , मराठी के वि. स. खाण्डेकर और शिवाजी सावंत गये ; हिन्दी के भारती , नरेश मेहता , मैथिलीशरण गुप्त , निराला , जगदीश गुप्त और नरेन्द्र कोहली गये और इन महासागरों में गोता लगाकर मोती निकाल ही लाये ।

बहरहाल मेरा यह शोध-कार्य डा. नरेन्द्र कोहली के उन उपन्यासों पर है जो रामायण और महाभारत की कथावस्तु पर आधारित है । प्रथम अध्याय "विषय-प्रवेश" में विषय को प्रवर्तित करने का प्रयत्न किया गया है । उपन्यास इस नये युग की नयी विधा है । गद्य के विकास के साथ ही इस विधा का भी विकास हुआ । यद्यपि उसकी गणना कथा-साहित्य में होती है और कथा-साहित्य की परंपरा तो प्राचीन काल से उपलब्ध ~~है~~ है ; किन्तु यह भी एक सत्य है कि उपन्यास का विकास हमारे यहां अंग्रेजी साहित्य के प्रभाव स्वरूप ही हुआ । वस्तु , शिल्प , भाषा, विषय , विचार आदि सभी दृष्टियों से यह नवीन है । योरोप में उत्क्रांति के बाद उसका विकास हुआ था , हमारे यहाँ नवजागरण के बाद । नवजागरण जिसे कई विद्वान और इतिहासकार "इण्डियन रेनेसां " कहते हैं, अनेक नवीन सामाजिक-धार्मिक मुद्दों को अग्रसर करता है , कई नये विमर्श सामने आते हैं । जिनमें दो प्रमुख हैं -- नारी विमर्श और दलित विमर्श । इन दो विमर्शों के कारण नवजागरण काल के लेखकों को कई नये विषय मिल जाते हैं जिनकी सशक्त अभिव्यक्ति उपन्यास में संभव थी । फलतः उपन्यास आता है । पूर्व-प्रेमचन्दकाल का उपन्यास कुछ अपरिपक्व है । वह स्थूल , कथावस्तु-प्रधान , उपदेशमूलक , प्रचारात्मक और प्रधानतः आदर्शवादी है । उसमें मानव-चरित्र का प्रायः अभाव -सा दिखता है । सारे चरित्र "सु" और "कु" में विभक्त मिलते हैं । प्रेमचंद इस उपन्यास को दिशा और गति देते हैं । मानव-चरित्र की सर्वप्रथम पहचान हमें प्रेमचंद कराते हैं । हिन्दी उपन्यास को उसका वास्तविक गौरव प्रेमचंद द्वारा हासिल होता है । प्रेमचंद के पूर्व हमें मुख्यतः दो औपन्यासिक प्रवृत्तियां मिलती हैं -- सामाजिक उपन्यास और ऐतिहासिक उपन्यास । किन्तु दरहकीकत वास्तविक सामाजिक उपन्यास का सूत्रपात तो प्रेमचंद

के द्वारा ही होता है । उसी तरह वास्तविक ऐतिहासिक xxxxxx उप-न्यास सर्वश्री वृन्दावनलाल द्वारा प्राप्त होते हैं । प्रेमचन्दोत्तरकाल में और अनेक औपन्यासिक प्रवृत्तियां उभरकर आती हैं , जिनमें उक्त दो के अतिरिक्त मनोवैज्ञानिक , समाजवादी , राजनीतिक , आंचलिक , पौराणिक , व्यंग्यात्मक , साठोत्तरी और समकालीन आदि उल्लेखनीय कही जा सकती हैं । डा. नरेन्द्र कोहली का रचना काल सन् 1960 से शुरू होता है । उनका प्रारंभिक औपन्यासिक कृतित्व सामाजिक यथार्थवादी उपन्यासों की ओर था , किन्तु "दीक्षा" के उपरान्त वे एक सशक्त पौराणिक उपन्यासकार के रूप में उभरकर आते हैं । कदा-चित् उनकी दिशा ही बदल जाती है । अतः इस अध्याय में हमने पौरा-णिक उपन्यासों पर विस्तार से विचार किया है । ऐतिहासिक और पौराणिक उपन्यासों के बीच एक विभाजक रेखा खींचनी आवश्यक है । हिन्दी के कुछेक औपन्यासिक आलोचकों तथा विद्वानों ने पौराणिक उपन्यासों की चर्चा भी ऐतिहासिक उपन्यासों के अन्तर्गत की है , जबकि पौराणिक उपन्यास और ऐतिहासिक उपन्यास ये दोनों भिन्न औपन्यासिक विधाएं हैं । पौराणिक उपन्यासों का वस्तु प्राचीन होता है , और कुछ लोग प्रत्येक प्राचीन वस्तु को इतिहास की वस्तु मानते हैं , xxxxx फलतः यह चूक हो गई है । इस अंतर को स्पष्ट करने के उद्देश्य से प्रस्तुत अध्याय में इतिहास और पुराण , इतिहास और पुरातत्वविद्या, इतिहास और संस्कृति , पुराण और संस्कृति , पुराण और मिथक आदि की विस्तृत चर्चा की गई है । पुराण काव्य है और इतिहास शास्त्र । पुराण में कल्पना के लिए पर्याप्त अवकाश है , जबकि इतिहास में "मैटर आफ फैक्ट्स " का महत्त्व है ।xxxxx पुराणों में काल-क्रमिकता (क्रोनो-लोजी) का xx सर्वथा अभाव है , जबकि इतिहास उसके बिना एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकता । अतः इस अध्याय में इसे साफ तौर पर बताया गया है कि जब से हमें हमारा इतिहास क्रमिक रूप से प्राप्त होता है , ऐतिहासिक तथ्य उपलब्ध होते हैं , वहां से हम इतिहास का प्रारंभ मानेंगे । अतः जिनका काल-क्रम निश्चित नहीं है , प्रमा-

णित नहीं है , प्रामाणिक नहीं है , असंदिग्ध नहीं है उसे इतिहास में स्थान नहीं मिलेगा । इतिहास तर्क पर आधारित है , बुद्धिगम्य है ; पुराण भावना और कल्पना पर आधारित है , श्रद्धागम्य है । अतः जो उपन्यास ऐतिहासिक वृतान्तों पर आधारित हैं उनको तो हम ऐतिहासिक उपन्यास की संज्ञा दे सकते हैं ; किन्तु जिनका इतिहास हमें ज्ञात नहीं है , जो पुरा-कथाओं पर आधारित है , ऐसे वृतान्तों पर आधारित उपन्यासों को हम पौराणिक उपन्यास कहेंगे । "जय सोमनाथ" , "विराटा की पद्मिनी " , " झांसी की राणी लक्ष्मीबाई " आदि को ऐतिहासिक उपन्यास कहा जायेगा ; किन्तु डा. कोहली के उपन्यास (रामायण-महाभारत पर आधारित) तथा "वयं रक्षामः " , " अपने अपने राम" , "प्रथम पुरुष" , " पवनपुत्र" आदि उपन्यासों को पौराणिक उपन्यासों की संज्ञा दी जा सकती है । अतः इस अध्याय में हमारी नम्र स्थापना है कि कि जिस प्रकार सामाजिक , ऐतिहासिक , मनोवैज्ञानिक , आंचलिक प्रभृति उपन्यासों का सूत्रपात क्रमशः प्रेमचन्द , वृन्दावनलाल वर्मा , जैनेन्द्र, फणीश्वरनाथ रेणु आदि से माना जाता है ; ठीक उसी प्रकार पौराणिक उपन्यासों का सूत्रपात डा० नरेन्द्र कोहली से मानना चाहिए । यहां एक और प्रश्न उपस्थित होता है कि जब ये उपन्यास पुराणों पर आधा-रित हैं तो फिर पुरा-कथाओं और इनमें क्या अंतर है ? अंतर यह है कि ये उपन्यासकार वस्तु तो पुराणों से लेते हैं किन्तु उनकी परिणति तार्किक होती है , उनका ध्यान उपन्यास की यथार्थधर्मिता पर रहता है , पुराणों की मिथक-कथाओं की ये तार्किक और वैज्ञानिक व्याख्या प्रस्तुत करते हैं । जैसे "राम-नाम से पत्थर तैरने लगे और सेतु का निर्माण हो गया " ऐसी मिथक-कथा को डा० कोहली ने इस रूप में प्रस्तुत किया है कि दक्षिण-भारत और श्रीलंका में जहां समुद्र का अंतर सबसे कम है , वहां सेतु बनाया गया ; दूसरे वस्तुतः वह [illegible] वास्तविक समुद्र न होकर "स्तिया" का अंश था । "स्तिया" उसे कहते हैं जहां समुद्र का पानी काफी उथला होता है । अतः कुछ प्रस्तरयुक्त जलपोतों को डूबोकर वह रास्ता बनाया गया था ।

इस प्रकार "पौराणिक उपन्यास " की एक स्पष्ट व्याख्या यहां दी गई है और पौराणिक उपन्यास और ऐतिहासिक उपन्यास की व्यावर्तक विभाजक रेखा यहां खींची गई है ।

हमारा शोध-प्रबंध डा. नरेन्द्र कोहली के रामायण और महाभारत पर आधारित उपन्यासों से सम्बद्ध है । अतः द्वितीय अध्याय में हमने अपने आलोच्य लेखक के जीवन-परिचय को निरूपित करते हुए उनके व्यक्तित्व के कुछ महत्वपूर्ण आयामों को स्पष्ट किया है । तदुपरांत उनके समग्र कृतित्व पर भी एक विहंगम दृष्टिपात किया गया है । सन् 1960 में "कहानी" पत्रिका में उनकी "दो हाथ " नामक कहानी प्रकाशित हुई थी । लेखक भी उसे ही अपनी प्रथम रचना मानते हैं । अतः कहा जा सकता है कि डा. कोहली की कथा-यात्रा या साहित्य-यात्रा सन् 1960 से आरंभित होती है और सम्प्रति भी उनका लेखन सक्रिय है । इस प्रकार लगभग पैंतालीस-छियालीस वर्षों का उनका रचना-काल है । उनका जन्म 6 जनवरी 1940 को सियालकोट में हुआ था , जो अब पाकिस्तान में है । अतः यह तो हो नहीं सकता कि विभाजन की विभीषिका ने उनको आंदोलित-विचलित नहीं किया होगा । विभाजन के उपरान्त उनका परिवार जमशेदपुर आ जाता है । दादाजी की दो-दो कोठियों को छोड़कर जमशेदपुर के आउट-हाउस में उनके परिवार को रहना पड़ता है । पिताजी तथा भाई के साथ लेखक को भी सड़क की पटरी पर बैठ-कर फल बेचने पड़ते हैं । पर इन सबके कारण लेखक में किसी प्रकार का हीनता-बोध पैदा नहीं होता । वस्तुतः बालक नरेन्द्र बचपन से ही प्रतिभावान था और अपनी कक्षा में हमेशा अव्वल रहता था । हीनता-बोध न पनपने का यह भी एक कारण हो सकता है । दूसरी कक्षा से लेकर बी.ए. तक की शिक्षा उनकी जमशेदपुर में हुई । प्राथमिक और xxxxxx माध्यमिक में उनकी शिक्षा उर्दू माध्यम से हुई । विज्ञान के विषयों में डिस्टिंक्शन से ज्यादा नंबर आने के बावजूद लेखक कलाके क्षेत्र में जाते हैं और हिन्दी साहित्य से बीए. करते हैं । स्कूल तथा कालेज में वाद-विवाद प्रतियोगिताओं में भी उनके नाम का डंका

बजता था । वही उनकी तार्किकता उनके इन उपन्यासों में भी रंग लायी है । बी.ए. के उपरान्त एम.ए. लिए लेखक दिल्ली आते हैं, जो उन दिनों में, और किसी हद तक आज भी, हिन्दी साहित्य का गढ़ माना जाता है । दिल्ली आने के उपरान्त उन्हें एक विस्तृत आकाश मिलता है । यह भी एक सुखद लक्षण है कि बहुत पहले ही लेखक को अपनी सीमा और मर्यादा का ज्ञान हो जाता है और कविता के क्षेत्र को छोड़कर वे कथा-साहित्य में आ जाते हैं । उनका प्रारंभिक लेखन व्यंग्येन्मुखी था और एक व्यंग्य लेखक के रूप में उनकी प्रतिष्ठा भी बनती जा रही थी । कविता को छोड़ दें तो उनकी सर्जक-प्रतिभा बहुमुखी है । कहानी, निबंध, नाटक आदि सभी क्षेत्रों में उनका लेखन चमलने लगा था । परन्तु बांगला देश के समय की राजनीतिक स्थितियों के कारण उनके लेखन में एक [illegible] जबरदस्त बदलाव आता है जिसे हम पूर्ववर्ती पृष्ठों में लक्षित कर चुके हैं । एक ईमानदार लेखक के उपरान्त एक निष्ठावान छात्राभिमुख अध्यापक, एक जागरूक नागरिक, निष्ठावान और ईमानदार पति, एक पिता-एक वात्सल्य सभर पिता, उत्तरदायित्वपूर्ण पुत्र आदि उनके व्यक्तित्व के अनेक बिन्दुओं को भी यहां उकेरा गया है । इन सबसे ऊपर डा. [illegible] कोहली एक बहुत बढ़िया और उमदा ईन्सान है । उनके व्यक्तित्व और कृतित्व के तमाम आयामों को यहां लक्षित किया गया है ।

तृतीय अध्याय में डा. कोहली के उन उपन्यासों का मूल्यांकन किया गया है, जो मूलतः रामायण की कथा पर आधारित हैं । "दीक्षा" उपन्यास से उनकी यह यात्रा शुरू होती है । "दीक्षा" के बाद "अवसर", "संघर्ष की ओर" तथा "युद्ध " रामायण की कथावस्तु पर लिखे गए हैं । उपन्यासों के मूल्यांकन के पूर्व रामकथा की पृष्ठभूमि को निरूपित करते हुए वैदिक साहित्य, संस्कृत रामायण काव्य, संस्कृत प्रबंध-काव्य, संस्कृत नाट्य-साहित्य ; पालि-प्राकृत-अपभ्रंश, देश-विदेश के अन्य भाषों में रामकथा आदि को रेखांकित करते हुए हिन्दी राम-काव्य परंपरा को निर्दिष्ट किया गया है । डा. कोहली के अतिरिक्त कुछेक हिन्दी

उपन्यासों में भी रामकथा को लिया गया है, उनका भी उल्लेख यहां कर दिया गया है। डा. कोहली के उपर्युक्त उपन्यास अपने आप में स्वतंत्र भी हैं और एक उपन्यासमाला की श्रृंखला के रूप में भी उनको देखा जा सकता है। उनमें पारस्परिक क्रमिकता और कार्य-कारण सम्बन्ध भी है। उपन्यास के शीर्षक भी सर्वथा उपयुक्त हैं। प्रथम उपन्यास के केन्द्र में विश्वामित्र, उनका सिद्धाश्रम और उनकी विचारधारा है। राम और लक्ष्मण यहां दीक्षित होते हैं और विश्वामित्र द्वारा प्रदत्त शिक्षा और दीक्षा के अनुरूप कार्य करने का मौका उन्हें "अवसर" में मिलता है। "अवसर" की गतिविधियां उन्हें क्रमशः "संघर्ष की ओर" ले जाती है, जिसकी अंतिम परिणति राम-रावण " युद्ध " में होती है।

इन चारों उपन्यासों में लेखक ने पौराणिक पात्रों का मानवीकरण और आधुनिकीकरण किया है। अनेक पात्रों की मनोवैज्ञानिक व्याख्या यहां प्रस्तुत की गयी है। लक्ष्मण को लेखक ने राम से दश वर्ष छोटा बताया है और पुत्रेष्टि यज्ञ को केवल तत्कालीन समाज की एक धार्मिक रूढ़ि घोषित किया है। लक्ष्मण जब राम के साथ वनगमन करते हैं तब वे किशोर अवस्था में थे। अतः उर्मिला वाले प्रसंग का उन्होंने छेद उड़ा दिया है। चरित्र-चित्रण में यथासंभव लेखक तटस्थ व निरपेक्ष दिखते हैं। यहां तक कि कैकेयी और शूर्पणखा जैसे ऋणात्मक चरित्रों के पीछे के मनोवैज्ञानिक कारणों की पड़ताल लेखक करते हैं। इस प्रकार ऋणात्मक (नेगेटिव) चरित्रों को भी न्याय देने की चेष्टा वे करते हैं।

लेखक के ये चारों उपन्यास आधुनिक समसामयिक परिवेश के भी सर्वथा उपयुक्त है। उनमें ऐसी अनेक समस्याओं का आकलन है जो हमारे वर्तमान जीवन में भी व्याप्त है। लेखक ने इन उपन्यासों में पौराणिक घटनाओं का अर्थघटन आधुनिक संदर्भ में किया है। अनेक मिथकों के आधुनिक संदर्भ लेखक ने प्रस्तुत किए हैं। अहल्या-प्रसंग, धनुष-भंग प्रसंग, सीताहरण प्रसंग, हनुमान द्वारा समुद्र संतरण करने का प्रसंग, सेतु-निर्माण प्रसंग जैसे अनेक प्रसंगों का चित्रण लेखक ने नये ढंग से किया है।

अज्ञातकुलशीला सीता के विवाह की समस्या के समाधान के लिए सीरध्वज राजा जनक सीता को वीर्यशुल्का घोषित करते हैं । सारे आर्यावर्त के राजा एक समय पर न जाकर अलग-अलग समय में मिथिला जाते हैं । उसी क्रम में विश्वामित्र भी राम-लक्ष्मण को लेकर वहां जाते हैं और विश्वामित्र राम को उस विचित्र अजगव की प्रचालन-विधि से अवगत करा देते हैं । इन उपन्यासों में लेखक ने मानवतावादी राम का चित्रण किया है । वे वनजा, अहल्या और सीता जैसी नारियों का उद्धार करते हैं । रावण-वध के उपरान्त "अग्नि-परीक्षा " वाली बात को लाक्षणिक रूप दिया जाता है कि इस एक वर्ष की अवधि में विपरीत परिस्थितियों में सीता जो जीवित रही है , वही उसकी अग्नि परीक्षा है ।

लेखक ने वानर , ऋक्ष , गृध्र , जटायु , संपाति , गरूड़ आदि का वर्णन पशु-पक्षी के रूप में न करके उनको तत्कालीन समाज की विभिन्न जातियों के लोगों के रूप में प्रस्तुत किया है । राक्षस को कोई जाति-विशेष न बताते हुए एक प्रवृत्ति बताया है कि किसी भी जाति का व्यक्ति अपनी पैशाचिक प्रवृत्तियों के कारण राक्षस हो सकता है । वस्तुतः इसमें राक्षस-संस्कृति और मानवतावादी भारतीय संस्कृति का संघर्ष निरूपित किया गया है । यह भौतिकतावाद और अध्यात्म का भी संघर्ष है । लेखक ने पौराणिक पात्रों के साथ-साथ कुछ काल्पनिक सामाजिक पात्रों को इस प्रकार मिला दिया है कि कहीं असहज या अस्वाभाविक नहीं प्रतीत होता ।

चतुर्थ अध्याय में डा. कोहली के उन उपन्यासों का मूल्यांकन प्रस्तुत है जो महाभारत की कथावस्तु पर आधारित है । डा. कोहली ने जैसे रामायण वाले उपन्यासों में मुख्यरूप से वाल्मीकि रामायण का ही आधार लिया था , उसी प्रकार यहां महर्षि वेदव्यास प्रणीत महाभारत को उन्होंने केन्द्र में रखा है । अनेक अवांतर कथाओं को उन्होंने अपने उपन्यासों में नहीं रखा है जिनका कोई सीधा सम्बन्ध मूल कथा के साथ नहीं है । यहां भी प्रारंभ में महाभारत की पृष्ठभूमि को निरूपित किया है । उसके पश्चात् हिन्दी के प्रबंध-काव्यों , खण्डकाव्यों , गीतिनाट्यों

का उल्लेख किया गया है जिनमें महाभारत की कथावस्तु को किसी-न-किसी रूप में लिया गया है । उसके पश्चात् डा. कोहली के निम्नलिखित आठ उपन्यासों की क्रमशः चर्चा हुई है — 1.बंधन , 2. अधिकार , 3. कर्म , 4. धर्म , 5. अंतराल , 6. प्रच्छन्न , 7. प्रत्यक्ष और 8. निर्बन्ध । प्रथम उपन्यास बंधन है और अंतिम "निर्बन्ध" । इस उपन्यास-श्रृंखला के अलग-अलग खण्डों में यद्यपि अलग-अलग पात्रों का महत्व दृष्टिगोचर होता है , तथापि फल की दृष्टि से विचार करें तो इसके नायक युधिष्ठिर ठहरते हैं । "बंधन" के केन्द्र में भीष्म हैं , किन्तु अलग-अलग खण्डों में मुख्यतः अर्जुन और भीम के पराक्रमों का वर्णन है । किन्तु उपन्यास के द्वितीय खण्ड से कृष्ण का प्रवेश होता है । कृष्ण का चरित्र इस प्रकार चित्रित हुआ है , उसमें अनेक स्थानों पर सांकेतिक शैली का प्रयोग हुआ है , जिससे कृष्ण उस युग के एक महान चिंतक , एक महान राजनीतिज्ञ , एक महान योद्धा के रूप में तो दृष्टिगोचर होते ही है ; किन्तु कई बार कई लोगों को उनके ईश्वरत्व का विश्वास होने लगता है ।

इस उपन्यास-श्रृंखला में लेखक यह बताते हैं कि एक गलत निर्णय अनेक गलत बातों को आमंत्रित करता है । हस्तिनापुर के सम्राट शान्तनु सत्यवती पर मुग्ध होते हैं , उसके कारण युवराज देवव्रत दासराज को जो वचन देते हैं और आजीवन अविवाहित रहकर ब्रह्म-पालन की जो भीष्म प्रतिज्ञा लेते हैं , उसके कारण उनको कई गलत काम धर्म के नाम पर करने पड़ते हैं , जिससे अन्ततः यह इतिहास-विश्रुत वंश का नाश होता है । "बंधन" में भीष्म अनेक प्रकार के बंधनों में बंधते चले जाते हैं । भीष्म प्रारंभ से ही मुक्त होना चाहते हैं , परन्तु ~~विडम्बना~~ विडम्बना यह है कि मृत्यु-पर्यन्त वे अपने परिवार के मोह से उबर नहीं सकते । "निर्बन्ध" उपन्यास में मृत्यु के साथ ही उनकी मुक्ति होती है । इस प्रकार यह उपन्यासमाला उसके प्रायः सभी पात्रों के लिए "बंधन" से "मुक्ति" की यात्रा है । भीष्म-प्रतिज्ञा के कारण जिन स्थितियों का निर्माण होता है ,उनमें कुरु-वंश में पाँडु और धृतराष्ट्र

जैसे व्यक्तियों का जन्म होता है -- एक रोगी और दूसरा जन्मांध । फलतः उनके पुत्रों में अधिकार की स्पर्द्धा शुरू होती है । पांडु के पुत्र पांडव -- युधिष्ठिर , भीम , अर्जुन , नकुल और सहदेव और धृतराष्ट्र के सौ पुत्र दुर्योधन , दुःशासन , दुर्मुख , विकर्ण , युयुत्सु इत्यादि । तत्कालीन शास्त्रों के अनुसार हस्तिनापुर का राज्य पांडु को मिलता है , किन्तु अधिकांशतः वह बाहर ही रहते हैं । फलतः राज्य धृतराष्ट्र संभालते हैं , पर उसका दुष्परिणाम यह आता है कि जब युधिष्ठिर राज्य संभालने योग्य हो जाते हैं , तब भी धृतराष्ट्र का मोह छूटता नहीं है । एक लम्बे समय तक सत्ता को हस्तगत कर लेने के कारण अब दुर्योधन हस्तिनापुर पर अपना अधिकार समझता है । अनेक षड्यंत्र जन्म लेते हैं । वारणावत के लाक्षागृह में पांडवों को अग्निसात् करने का षड्-यंत्र रचाजाता है , किन्तु विदुर की दूरंदेशी के कारण पांडव बच जाते हैं । द्रौपदी के स्वयंवर में वे प्रकट होते हैं । किन्तु दुर्योधन राज्य पर से अपना अधिकार छोड़ने के लिए प्रस्तुत नहीं है । फलतः कुरुओं के राज्य का विभाजन होता है । पांडव अपने उद्योग से खांडववन को इन्द्रप्रस्थ में परिवर्तित कर देते हैं । राजसूय यज्ञ करके युधिष्ठिर चक्रवर्ती सम्राट होते हैं , परंतु द्यूतसभा में उनको बुलाकर उनके सर्वस्व का हरण कर लिया जाता है । एकवस्त्रा रजस्वला द्रौपदी को राजसभा में घसीटकर लाया जाता है । यह घटना ही कुरुक्षेत्र के "महासमर" का कारण बनती है । बारह साल के वनवास और एक साल के अज्ञातवास के उपरान्त भी दुर्योधन युधिष्ठिर का उसका इन्द्रप्रस्थ का राज्य सौंपने को तैयार नहीं होता । भीष्म , विदुर , व्यास , कृष्ण आदि सभी शांति स्थापित करने का यत्न करते हैं , किन्तु दुर्योधन किसीकी सुनता नहीं है और "महासमर" होता है , जिसमें युयुत्सु के अतिरिक्त सारे कौरवों का नाश होता है । अश्वत्थामा युद्ध के अंतिम दिन की रात में सुषुप्तावस्था में द्रौपदी के पांचों पुत्रों तथा भाइयों का वध करता है । एक विषादयुक्त वातावरण में यह कथा समाप्त होती है । ये तथा ऐसी सैंकड़ों कथाएं महासमर के इन आठ खण्डों में उपन्यस्त हुई हैं । यहां भी उपन्यासों में कार्य-कारण श्रृंखला का निर्वाह हुआ है । एक घटना दूसरी

घटना को जन्म देती है । "बंधन" के अन्त में कुन्ती पांडवों को लेकर हस्तिनापुर आती है , अतः अधिकार" की कथा उनके लालन-पालन और शिक्षा-दीक्षा से शुरू होती है । "अधिकार" के अन्त में कृष्ण-बलराम और यादवों के दबाव के कारण युधिष्ठिर को युवराज बनाना पड़ता है , फलतः "कर्म" का वारणावत काण्ड जन्म लेता है । "कर्म" के अन्त में पांडव और भी सशक्त रूप में उभरते हैं । कांपिल्य में अर्जुन मत्स्य-वेधन में सफल होता है , फलतः पांचों पांडवों से त्रैलोक्य-सुन्दरी द्रौपदी का विवाह होता है । इसके कारण "धर्म " के प्रारंभ में राज्य-विभाजन घटित होता है । "धर्म" के अंत में द्रौपदी का अपमान होता है, पांडवों को बारह साल का वनवास तथा एक साल का अज्ञातवास मिलता है , जिसके कारण पांडवों के जीवन में एक "अंतराल " आता है । "प्रच्छन्न" में अज्ञातवास है तो "प्रत्यक्ष" में स्थिति स्पष्ट होजाती है कि "महासमर " होगा और कौन किसके साथ है । अंततः "निर्बन्ध" में कौरवों का नाश हो जाता है और कई लोग कई प्रकार के बंधनों से मुक्त हो जाते हैं ।

"महाभारत" हमारा धर्मशास्त्र , न्यायशास्त्र और समाज-शास्त्र भी है । इसमें तत्कालीन समाज की बहुत-सी मान्यताओं , रीति-रिवाजों और परंपराओं का चित्रण हमें मिलता है । अनुराग-विवाह , राक्षस विवाह , बहुपतित्व , बहुपत्नीत्व , अस्थायी विवाह , हरण और अपहरण का अंतर , नियोग-विधि , नियोग के नियम , नियुक्त पुरुष , औरस पुत्र , क्षेत्रज पुत्र , कानीन पुत्र , स्वयंवर की विधि , किसी कन्या को वीर्यशुल्का घोषित करना , यौतुक (दहेज) लेना और देना जैसी अनेक समाजशास्त्रीय बातों का ज्ञान यहां हमें होता है । द्वन्द्व युद्ध , द्वैरथ युद्ध , संशप्तक युद्ध , चक्रव्यूह-युद्ध आदि अनेक प्रकार के युद्धों का परिचय भी हमें यहां होता है । लेखक ने यहां भी अनेक मिथक कथाओं और चमत्कारिक घटनाओं का निरसन किया है । देवों का चित्रण महाशक्तियों के रूप में हुआ है । जैसे कई छोटे और

अविकसित देश अमरिका , रूस , फ्रान्स , ब्रिटेन आदि देशों से शस्त्रास्त्र लेते रहते हैं ; ठीक उसी तरह इन्द्र , शिव , अग्नि , वरुण , कुबेर आदि देव-शक्तियों का चित्रण महाशक्तियों के रूप में हुआ है । पुरा-कथा कहते हुए भी लेखक का ध्यान समसामयिक घटनाओं से हटा नहीं है । कथा को अपने साम्प्रत समय के यथार्थ से वे बराबर जोड़ते हुए चले हैं । अतः "यन्न भारते , तन्न भारते " की उक्ति सार्थक प्रतीत होती है ।

प्रबंध का पंचम अध्याय रामायण और महाभारत के प्रमुख पात्रों को लेकर नियोजित हुआ है । रामायण के प्रमुख पात्रों में राम , सीता , लक्ष्मण , दशरथ , कौशल्या , कैकेयी , सुमित्रा , विश्वामित्र , वसि-ष्ठ , अगस्त्य , शूर्पणखा , वाली , सुग्रीव , हनुमान , रावण , मंदो-दरी , कुंभकर्ण , विभीषण , मेघनाद , जनक , तारा , रूमा आदि का आकलन किया ××××××× गया है ; तो महाभारत में शान्तनु , भीष्म , सत्यवती , कृष्ण द्वैपायन व्यास , अम्बा , अम्बिका, अम्बालिका , धृतराष्ट्र , पांडु , विदुर , गांधारी , कुन्ती , माद्री, युधिष्ठिर , भीम , अर्जुन , नकुल , सहदेव , दुर्योधन , दुःशासन , शकुनि , कर्ण , अश्वत्थामा , द्रोणाचार्य , ×××××××× कृपाचार्य, कृष्ण , बलराम , द्रौपदी , सुभद्रा , हिडिम्बा , जरासंध , शिशुपाल, अभिमन्यु , घटोत्कच तथा युयुत्सु आदि का चरित्रांकन किया गया है ।

जैसा कि अनेक बार कहा गया है हमारा सम्पूर्ण भारतीय साहित्य रामायण और महाभारत का महा ऋणी है । ये दो महाग्रन्थ भारतीय सभ्यता और संस्कृति के परिचायक हैं । हमारे जीवन की कोई ऐसी समस्या नहीं होगी जिनका निराकरण इन दो महाकाव्यों में न हुआ हो । भारतीय संस्कृति , भारतीय जन-जीवन , जन-मानस को हम ×× तब तक भलीभांति नहीं समझ सकते जब तक इन दो ग्रन्थों से परिचित न हों । ये दो ग्रन्थ हमारे जन-जीवन में रच-पच गए हैं ।

डा. नरेन्द्र कोहली की इन दोनों उपन्यास-श्रृंखलाओं का मैंने कई-कई बार अध्ययन -अनुशीलन किया है । इससे पुरा-विद्या ﴾मायथोलोजी﴿ के मेरे ज्ञान में अभिवृद्धि हुई है । मेरा मानस अधिक संपन्न और समुन्नत हुआ है । इन उपन्यासों पर आधारित यह भगीरथ कार्य यहां संपन्न हुआ है । किन्तु अभी डा. कोहली तथा उनके उपन्यासों तथा कृतित्व पर कई-कई आयामों को लेकर शोध-कार्य की पूरी-पूरी संभावना है । उनके समग्र कृतित्व को लेकर कार्य हो सकता है । उनके उपन्यासों में अनुस्यूत मिथक तत्वों की [illegible] पुनर्व्याख्या हो सकती है । उनके उपन्यासों में निरूपित परिवेश पर अलग से स्वतंत्र कार्य किया जा सकता है । रामायण या महाभारत पर आधारित उपन्यासों की भाषा को लेकर भी कोई चाहे तो कार्य कर सकता है । उनके उपन्यासों का समाजशास्त्रीय अध्ययन हो सकता है ।

हमारे यहां कहा गया है -- "वादे वादे तत्व जायते " । मेरा यह शोध-कार्य भविष्यत् अनुसंधित्सुओं को किंचित-मात्र भी उपयोगी होगा तो मैं अपने इस श्रम को सार्थक समझूंगा । अन्त में प्रसादजी की निम्न पंक्तियों के साथ विरमता हूं --

" इस पथ का उद्देश्य नहीं है , श्रान्त भवन में टिक रहना ;
किन्तु पहुंचना उस सीमा तक , जिसके आगे राह नहीं ।"

---: इति शुभम् :-----